# कितना पुराना पेपर का सफर

**आजकल पेपर्स हो रहे हैं। इनकी तैयारी में आप बुक्स पढ़ते है और रिवीजन करने के लिए उत्तरों को लिखकर देखते है, लेकिन क्या आपने गौर किया है कि आपकी किताबें, न्यूजपेपर या मैगजीन में अलग-अलग तरह का पेपर होता है। इसके अलावा नोटों, पेपर बैग, टिश्यू पेपर, नेपकिन, टॉयलेट पेपर, रैपिंग पेपर जैसी चीजों में भी पेपर देखते ही है। लेकिन क्या आपने कभी सोचा है कि इनमें इस्तेमाल होने वाला पेपर कहां से आता है और बनता कैसे है? इसकी जानकारी हम आपको बताते हैं।**

पेपर शब्द लैटिन और ग्रीक भाषा के पेपिरस या साइपरस से लिया गया है। पेपर बनाने के सफर की शुरुआत कोई 5500 साल पहले मिस्र में हुई। मिस्र के लोगों ने नील नदी की घाटी में पाए जाने वाले पेपिरस पौधे से पेपर बनाया। पेपिरस की पतली-पतली स्ट्राइप्स काटकर उसे चटाई की तरह बुना गया। फिर उसे पानी में अच्छी तरह से भिगोया गया। उसकी दो शीट को दबाकर आपस में जोड़ा जाता था, फिर उसे सुखाया जाता था। सूखने पर यह चटाईनुमा एक प्लेन पेपरशीट बन जाती थी, जिस पर स्याही से लिखा जा सकता था। धीरे-धीरे पश्चिम एशिया के देशों में भी इसका इस्तेमाल किया जाने लगा।

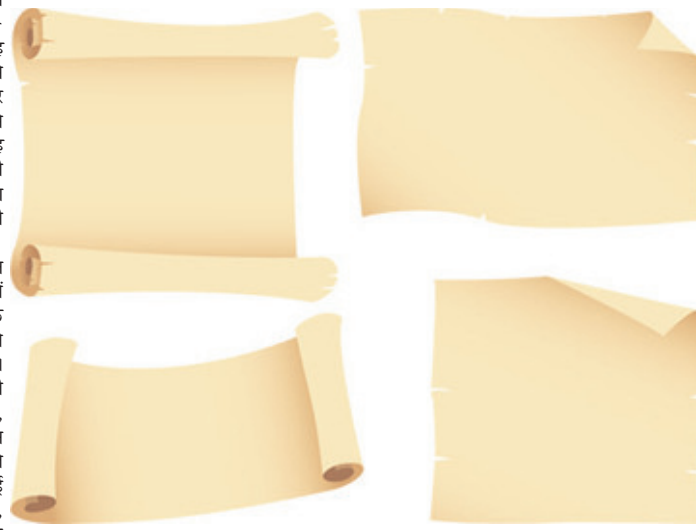

इस तकनीक को करीब 3,000 साल तक अपनाया गया। लेकिन फिर इसमें समस्या आने लगी क्योंकि यह तकनीक काफी मुश्किल थी और मांग ज्यादा होने से पौधे की पैदावार कम होती जा रही थी। तब मिस्र के लोगों ने भेड़ों और बकरी की खाल से चर्मपत्र पेपर बनाना शुरू किया, जिसे प्यूमिक स्टोन से पॉलिश करके प्लेन बनाया जाता था। आज तुम जो पेपर देखते हो, उसकी खोज 104 ई में चीन के त्साई लुन ने की थी। उन्होंने शहतूत की छाल, बांस के फाइबर, चीनी, घास और अन्य पौधों के पल्प को इस्तेमाल किया। 8वीं सदी में अरब देश पेपर बनाने की तकनीक में बदलाव लाए।

उन्होंने बांस के बजाय सन, कपास और पेड़ की छाल को मिलाकर पेपर की पतली शीट बनाई। साथ ही अपनी इस तकनीक को यूरोप में भी फैलाया।

पेपर की बढ़ती मांग को देखते हुए दुनिया भर में बड़े पैमाने पर पेपर बनाया जाने लगा। समरकंद में 1150 ई में पहली पेपरमिल बनी। यहां किताबें बननी भी शुरू हुईं। 1448 में जर्मनी के जोहानिस गुटनबर्ग ने प्रिंटिंग प्रेस शुरू की, जहां किताबें और अन्य दस्तावेज बनाने के काम में तेजी आई।

एक अमेरिकी जॉन गेम्बले ने ऐसी मशीन बनाई, जिससे पेपर का पूरा रिम एक बार में ही बनाया जा सकता था। उन्होंने यह मशीन फ्रांस के रॉबर्ट निकोलस लुईस की मशीन देखकर बनाई।

पेपर लकड़ी के पल्प से भी बनाया जा सकता है- यह खोज फ्रांसीसी वैज्ञानिक रेने द रिआमुर ने 1700 ई में की। उन्हें यह जानकारी तब मिली जब वे कीटों पर अध्ययन कर रहे थे। उन्होंने देखा कि कुछ कीट पेड़ की लकड़ी को धीरे-धीरे खा रहे थे और उससे बाद में लकड़ी के ऊपर घर बना लेते थे। उनसे प्रेरणा लेकर 1847 में फ्रेडरिक गोटलोब किलर ने लकड़ी के पल्प से पहली बार पेपर बनाया।

इसके बाद तो पेपर मिलें पूरे यूरोप और एशिया में फैल गईं। 1803 से पहले तक अधिकतर पेपर हाथ से बनाया जाता था, लेकिन 19वीं सदी में यह बड़ी-बड़ी मशीनों से बनाया जाने लगा। आज जो पेपर बनाया जाता है उसमें 95 प्रतिशत लकड़ी होती है। इसके लिए पेड़ के तने, ऊपरी शाखाएं और लकड़ी काटने की मिलों के कचरे को लिया जाता है।

**लकड़ी से ऐसे बनता है पेपर**

पेपर बनाने के दो तरीके हैं- रसायनिक (कैमिकल) और यांत्रिक (मैकेनिकल)। यांत्रिक प्रक्रिया में लकड़ी के पूरे फाइबर और पल्प को इस्तेमाल किया जाता है। इस तरीके से बने पेपर को बनाने में खर्च कम आता है, लेकिन इसकी चालिटी ज्यादा अच्छी नहीं होती। रसायनिक प्रक्रिया में लकड़ी के पल्प से अलग करके कुछ कैमिकल और सेलूलोज मिलाया जाता है। इससे पेपर की चालिटी तो अच्छी होती है लेकिन इसकी खामियों को अनदेखा नहीं किया जा सकता। ऐसा पेपर मंहगा होता है और इसे बनाते वक्त हमारे वातावरण में प्रदूषण फैलता है।

तुम्हारी किताबें रसायनिक तरीके से बनाए गए पेपर से बनती हैं। न्यूज पेपर में 80 प्रतिशत और मैगजीन में 50-70 प्रतिशत यांत्रिक पेपर इस्तेमाल किया जाता है। नेपकिन, टिश्यू पेपर, टॉयलेट पेपर को बनाते वक्त लकड़ी के पल्प में सेलूलोज मिलाया जाता है और गोंद नहीं मिलाई जाती। इसीलिए ये पानी सोख लेते हैं।

# क्यों है नागौर खास

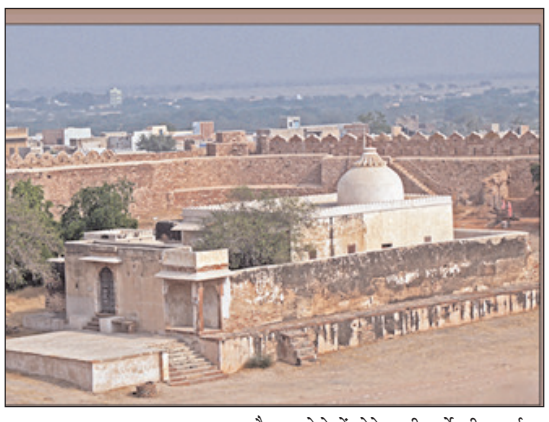

रंग-रंगीला राजस्थान अपनी नायाब खूबसूरती व रजवाड़ी शान के प्रतीक किलों और महलों के कारण सदा से ही पर्यटकों के आकर्षण का प्रमुख केंद्र रहा है। आज हम राजस्थान के मध्य भाग में बसे एक ऐसे ही पर्यटन स्थल नागौर की सैर करते हैं तथा यह जानते हैं कि नागौर क्यों है पर्यटकों के लिए खास।

जोधपुर से लगभग १३७ किमी उत्तर में स्थित है नागौर। नागौर का किला दूर-दूर तक फैली रेत के बीच एक प्रकाश स्तंभ की तरह दिखाई देता है। ४थी शताब्दी में अस्तित्व में आया यह किला राजस्थान के अन्य किलों की तरह ही ऊंची पहाड़ी की चोटी पर स्थित है।

नागौर की सुंदरता यहां के पुराने किलो व छतरियों में है, जिसका उत्कृष्ट उदाहरण हमें नागौर में प्रवेश करते ही देखने को मिलता है। इस नगरी में प्रवेश करने के लिए तीन मुख्य द्वार है, जिनके नाम देहली द्वार, त्रिपोलिया द्वार तथा नाकाश द्वार है। नागौर व उसके आसपास के पर्यस्थलों में प्रमुख नागौर का किला तारकिन की दरगाह वीर अमर सिंह राठौड़ की छतरी, मीरा बाई की जन्म स्थली मेड़ता, खींचसर किला, कुचामन किला आदि है।

किले के भीतर भी छोटे-बड़े सुंदर महल व छतरियां हैं, जो हमें राजस्थान के गौरवशाली इतिहास में खींच ले जाते हैं। किले के भीतर तीन सुंदर पैलेस हाडी रानी महल, शीश महल, शीश महल और बादल महल हैं, जो अपने सुंदर भिति चित्रों के कारण प्रसिद्घ हैं। इनके समीप ही एक मस्जिद है, जिसे मुगल शासक अकबर ने बनवाया था।

यहां पर सूफी संत मोइनुद्दीन चिश्ती की दरगाह भी है। इसी के साथ ही किले के भीतर राजपूताना शैली में बनी हुई सैनिकों की सुंदर छतरियां भी हैं। नागौर का मुख्य आकर्षण यहां का पशु मेला है जो यहां प्रतिवर्ष वृहद स्तर पर आयोजित किया जाता है। इस मेले में होने वाली मुर्गो की लडाई, ऊंट की दौड़, कठपुतली का खेल, राजस्थानी नृत्य आदि भी पर्यटकों के लिए आकर्षण का प्रमुख केंद्र होते हैं। इस मेले में खासतौर पर ऊंट, भेड़, घोड़े, गाया आदि पशुओं का क्रय-विक्रय होता है। सूर्य के अस्त होने के साथ ही नागौर के इस पशु मेले में यहां के पारंपरिक लोक नृत्य की गूंज एक सुंदर समा बाँध देती है।

सदा से पर्यटकों के आकर्षण का केंद्र रहा राजस्थान वाकई में अपने भीतर किलो व महलों के रूप में नायब खूबसूरती को समेटे हुए है। एक बार आप भी राजपूतों की इस धरती की सैर कीजिएगा।

मारवाड़ का नागौर एक ऐसा क्षेत्र है, जो कई ऐसी विभुतियों की जन्म स्थली है, जिन्होंने पूरी दुनिया में मारवाड़ की माटी का नाम रोशन किया। डिंगल और पिंगल भाषा में कई ग्रंथों की रचना करनें वाले प्रसिद्घ कवि वृंद का जन्म नागौर के मेड़ता में हुआ था। मेड़ता कृष्ण भक्त मीराबाई की भी जन्मस्थली है। अकबर के नौ रत्नों में से अबुल फैज और अबुल फजल दोनों भाइयों का जन्म नागौर में ही हुआ था। यही नहीं अकबर के दरवारी बुद्घिमान बीरबल भी नागौर जिले के ही रहने वाले थे।

कै से पहुंचे

भारत की राजधानी नई दिल्ली व राजस्थान की राजधानी जयपुर से मेड़ता रोड के लिए कई बसें उपलब्ध है। मेड़ता रोड से नागौर की दूरी ८२ किमी है, जिसे आप बस या टैक्सी से तय कर सकते हैं।

# विश्व की सबसे छोटी छिपकली

तुम्हें यह जानकर हैरानी होगी कि इस छिपकली की लंबाई केवल 1.3 इंच ही है। इतनी छोटी छिपकली को खोज पाना भी बड़ा मुश्किल काम था। क्योंकि आकार छोटा होने की वजह से यह बड़े आराम से, किसी भी छोटी पत्ती के पीछे छिप जाती थी। छिपकली की खोज करने वाली टीम रात में जंगलों में रुकी। रात में जब यह भोजन की तलाश में बाहर आई, तभी टीम की नजर इस पर पड़ी और उन्होंने इसे पकड़ लिया। इसके आकार को देखकर सभी वैज्ञानिक हैरान रह गए। यह इतनी छोटी है कि इसे आसानी से ऊंगली के ऊपर बिठाया जा सकता है। यह तुम्हारी ऊंगली के सिरे के गोल हिस्से पर आ जाती है।

# चूहों की नई प्रजाति मिली

ब्राजील के एटलांटिक जंगलों में पेड़ों पर रहने वाले चूहों की नई प्रजाति का पता लगा है। एटलांटिक जंगल ब्राजील के नष्ट हो रहे पारिस्थितिक तंत्रों में से एक हैं।

# क्या आप जानते हो मादा बुलबुल नहीं गा पाती

बुलबुल खुले स्थानों में रहना पसंद करती है। यूरोप में बुलबुल की एकमात्र प्रजाति पाई जाती है। इसके ऊपर नीले रंग का धब्बा होता है, जबकि अन्य प्रजातियों में यह हल्के भूरे रंग की होती है

बुलबुल को तो तुमने देखा ही होगा ओर कितनी बार उसे गाते भी सुना होगा। लेकिन क्या तुम जानते हो कि मादा बुलबुल नहीं गा सकती। वो तो सिर्फ क्री-क्री की आवाज निकालती है।

बुलबुल एक छोटी सी काली चिड़िया होती है। यह अपनी मीठी आवाज के लिए नहीं, बल्कि लड़ने की आदत के कारण जानी जाती है। लोग इसे पालते भी हैं। इनमें केवल नर बुलबुल ही गा पाते हैं।

हम हमेशा बुलबुल की आवाज सुनकर ये अंदाजा लगाने लगते हैं कि मादा बुलबुल कितना सुंदर गाती होगी। लेकिन वो तो गा ही नहीं सकती।

पर ऐसा भी नहीं है कि मादा बुलबुल की आवाज सुरीली नहीं होती।

बस ये गा नहीं पाती। देखने में ये प्यारी चिड़िया बुलबुल हरे-भूरे मटमैले रंग की होती है। ये हल्का सा पीला और हरा रंग लिए हुए भी होती है।

इसका शरीर पतला-दुबला होता है। लंबी दुम और ऊपर की तरफ उठी चोटी के कारण इसे बड़ी आसानी से पहचाना जा सकता है। खाने में इसे कीड़े-मकोड़े, फल-फूल ज्यादा पसंद हैं।

विश्व भर में इनकी कुल 2600 प्रजातियां पाई जाती हैं। इनकी कई प्रजातियां भारत में भी पाई जाती हैं, जिनमें से एक गुलदुम बुलबुल है।

कई वन्य प्रजातियों को ग्रीन बुलबुल भी कहा जाता है। लगभग सभी अफ्रीकी प्रजातियां वर्षा वनों में पाई जाती हैं। बुलबुल खुले स्थानों में रहना पसंद करती है। यूरोप में बुलबुल की एकमात्र प्रजाति पाई जाती है। इसके ऊपर नीले रंग का धब्बा होता है, जबकि अन्य प्रजातियों में ये हल्के भूरे रंग की होती है।

भारत में पाई जाने वाली बुलबुल की कुछ प्रजातियां ये हैं- गुलदुम बुलबुल, सिपाही बुलबुल, मछरिया बुलबुल, पीली बुलबुल आदि।

इसी तरह की एक और खूबसूरत बुलबुल है, जिसका नाम है शाह बुलबुल।

इसे अंग्रेजी में पैराडाइज फ्लाइकेचर कहा जाता है।

यह बुलबुल सफेद रंग की होती है। इसके सिर पर काले रंग की कलंगी होती है।

साथ ही दो लंबे रिबन जैसी पूंछ भी होती है, जबकि मादा बुलबुल हल्के लाल-भूरे रंग की होती है और इसकी पूंछ नही होती।

# क्या ऐसा भी रेत है जो गाना गाती है

इस मायावी संसार में कुछ भी असम्भव नहीं। इस विचित्र संसार में ऐसी-ऐसी विचित्र घटनाएं घटती हैं जिन्हें सहजता से कोई मस्तिष्क स्वीकार नहीं कर सकता और जिनके आगे वैज्ञानिकों की बुद्धि भी चश्च र खाने लगती है।

ऐसे ही विचित्र रहस्यों में से एक रहस्य यह भी है कि इस संसार में ऐसी बालू अथवा रेत भी है जो गाना गाती है और संगीत-लहरियों पर झूमने लगती है। घटना दरअसल बारहवीं शताब्दी की है जिस समय मार्को पोलो अपनी चीन यात्र पर निकला हुआ था। उस समय मार्को पोलो मध्य एशिया के दुर्गम रेगिस्तान 'टकला माकान' को अपने काफिले सहित पार कर रहा था।

मार्कोपोलो को चलते-चलते जब शाम हो गई तो एक थोड़ा-सा साफ और सुरक्षित स्थान देखकर उसने अपना खम्भा गाड़ दिया। खम्भा गाड़ देने के बाद काफिले ने अपना भोजन पकाया और उसे खा-पी कर पड़ गए। अंधेरे ने प्रभाव भरना शुरू कर दिया। तभी पास से ही संगीत की मधुर स्वर-लहरी गूंज उठी। संगीत में अलौकिक प्रभाव था। संगीतकी स्वर-लहरी में लगातार सीटी बजने-सी भी आवाज आ रही थी। दल के लोगों ने मार्कोपोलो सहित इधर-उधर जाकर झांक झांक कर देखा किन्तु स्वर लहरी का कोई भी रहस्य किसी की समझ में नहीं आया।

जब इस मधुर गीत और सीटी का रहस्य किसी की भी समझ में नहीं आया तो दल के लोगों ने इसे मृतात्मा समझा और घबरा उठे। कुछ लोग तो भाग खड़े हुए। मार्कोपोलो के देखते-देखते लगभग सभी कुली-नौकर भाग खड़े हुए थे किन्तु उनमें से सिर्फ तीन को ही वह बड़ी मुश्किल से रोक पाये किन्तु अकस्मात, इस प्रकार के संगीत गाने वाले भूत के डर से वे रात-भर सुख की नींद न सो सके।

उन्हें यह बात समझ में नहीं आ रही थी कि इतने सुनसान जंगल में आखिर रात-भर मीठा संगीत क ौन देता है। ये बचे हुए कुली भी निरन्तर भागने की आतुरता व्यक्त करते रहे। मार्कोपोलो ने इन कुलियों को रोकने, समझाने-बुझाने में कोई कसर नहीं रखी थी। उसने बड़ी चतुराई से उन्हें रोके रखने में सफलता प्राप्त की।

मार्कोपोलो ने उन्हें रोकने में अपने पास रखे जादू के ताबीज को दिखलाया और उन्हें समझाते हुए कहा, 'यह ताबीज भूतों से रक्षा करता है।' उसने यह भी बताया कि कल जो कुली भाग खड़े हुए थे, उन्हें संगीत वाले भूत ने सामने वाले टीले से पीछे पकड़ कर चबा डाला है और उनकी चमड़ी की डुगडुगी बनाकर बजाता फिर रहा है। वह यहां तक भी आ सकता है। तुम अगर भागना चाहो तो भाग जाओ। भूत तुम्हारी भी वही दुर्गति कर देगा जो उसने अन्य कुलियों की की है किन्तु मेरा यह अभिमन्त्रित तावीज सिर्फ मेरी ही नहीं, तुम्हारी भी रक्षा कर सकेगा।

मार्कोपोलो की उक्त तावीज वाली बात सुनकर वे रूके रहे। तभी अपने अदम्य साहस के बल पर यह महान अभियात्री उस खतरनाक रेगिस्तान को पार करने में सफल हो सका।

मार्कोपोलो ने उस रेत से निकलने वाले संगीत का रहस्य जानने की कोशिश की किंतु वह इस गाने वाली बालू के रहस्य को जान नहीं सका। यह महान अभियात्री भूत-प्रेत जैसी बातों पर तो कतई विश्वास नहीं करता था किन्तु उसकी समझ में उस शान्त संगीत-लहरी का रहस्य समझ में न आ सका। इस रहस्य को समझने के प्रयास में मार्कोपोलो समय का शिकार हो गया।

इस संगीत देने वाली रेत पर से पर्दा इस शताब्दी के प्रारंभ में उठा था। प्रसिद्ध अंग्रेज विज्ञानी सर ऑरेल स्टाइल ने गोबी के इस मरूस्थल पर स्वयं आकर, परीक्षण किया, सर्वेक्षण किया। अपने सर्वेक्षण में बताया, 'यह बालू-ध्वनि मुखर है अर्थात् यह गोबी के मरूस्थल की रेत ही संगीत-लहरी छेड़ती है। बाकी न उसे कोई भूत गाता है और न अन्य कोई। सर्वेक्षण रिपोर्ट में उन्होंने यह भी स्वीकार किया कि इस रेत से वाद्य-यन्त्रों की तरह का क्रमबद्ध ध्वनि-प्रवाह निकलता है।'

गोबी का यह मध्य एशिया स्थित रेगिस्तान प्रायः लगभग आठ लाख वर्ग मील में बिखरा पड़ा है। इसी के अन्तर्गत रेगिस्तान 'टकला माकान' का स्थान भी स्थित है। इस वैज्ञानिक ने यह भी स्वीकार किया है कि इस गोबी मरुस्थल के 'टकला माकान' नामक स्थान के अलावा अन्य कई स्थानों पर भी रेत गाने का काम करती है। इनकी संगीत लहरियां भी अलग-अलग स्थानों पर अलग-अलग प्रकार की प्रादुर्भूत होतीहैं।

सर बारेल स्टाइन ने स्वयं यह भी स्वीकार किया है कि 'टकला- माकान' क्षेत्र के पश्चिमी अंचल 'अदास पादशी' के सारे क्षेत्र की रेत संगीत- ध्वनियां पैदा करती है।

इसी प्रकार स्पेन का एक यात्री एण्टोनियों डी अल्लोवा जब अपने दल के साथ एण्डिज पर्वत को पार कर रहा था तो वह 'पर्चा मार्का नोटी' के समीप वायु-मण्डल में गूंजता हुआ संगीत सुन सका। एण्डिज पर्वत श्रेणी के इस संगीत से न केवल एंटोनियां डर गया, उसके सभी साथी घबराकर भाग खड़े हुए। इन भागने वाले यात्रियों ने तो यहां तक बताया कि उन्होंने अत्यन्त विशाल आकार दैत्य की डरावनी काली छाया भी देखी थी।